उग्रवाद (1905-1919 ई.)

[Extremism (1905-1919)]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्षों (1885 ई. से 1905 ई. तक) में पूर्ण रूप से उदारवादी नेताओं के प्रभाव में थी, जो अंग्रेजों की न्यायप्रियता एवं संवैधानिक साधनों में विश्वास करते थे। नरम दलीय नेताओं ने ब्रिटिश सरकार के समक्ष अपनी मांगे रखी परन्तु ब्रिटिश सरकार ने इन्हें अनदेखा कर दिया। परिणाम स्वरूप भारतीयों में सरकार के प्रति विश्वास हटने लगा तथा निराशा बढ़ने लगी। **स्वयं जी.के. गोखले ने कहा था कि – 'सरकार अपने वचनों का पालन नहीं कर रही है और जो वायदे किये उनसे पीछे हट रही है।'** अतः इससे कांग्रेस में एक नया गुट उत्पन्न हुआ, जिसने संघर्ष के माध्यम से सरकार पर दबाव डालने एवं स्वराज्य की प्राप्ति का निश्चय किया, जिन्हें संघर्षवादी या उग्रवादी कहा जाता है।

उग्र (जुझारू) राष्ट्रवाद का विकास
(Development of Extremist Nationalism)

भारतीय राजनीति में उग्र राष्ट्रवाद का उदय एवं विकास कोई आकस्मिक घटना नहीं थी, बल्कि इसके कारण अप्रत्यक्ष रूप से बहुत पहले से विद्यमान थे। बीसवीं सदी के आरम्भ होते ही लड़ाकू राष्ट्रवादियों की विचारधारा को एक अनुकूल राजनैतिक वातावरण मिला और इसके अनुयायी भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के द्वितीय चरण का नेतृत्व करने सामने आए। **बाल गंगाधर तिलक** के अलावा उग्रवादी आंदोलन के अन्य प्रमुख नेता थे, **विपिनचन्द्र पाल, अरविन्द घोष** और **लाला लापजतराय** आदि।

भारतीय राष्ट्रीय आंदालेन के प्रथम चरण (1985–1905) के उदार राष्ट्रवादियों ने भारतीयों को आवश्यक राजनैतिक प्रशिक्षण प्रदान किया था, फलतः भारतीय जनता राजनैतिक दृष्टि से जागरूक हो गई थी। किन्तु कांग्रेस स्वयं इस काल में राजनीति के क्षेत्र में कोई महत्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त नहीं कर सकी थी, फलतः 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक

तक आते–आते कांग्रेस की लोकप्रियता कम होने लगी। सामान्य जनता भी कांग्रेस से अलग–थलग थी। अतः राजनैतिक दृष्टि से जागरूक लोगों का नरमपंथी या उदारवादी नेतृत्व के सिद्धान्तों एवं तरीकों से मोह भंग होने लगा। सभाओं, याचिकाओं, स्मरण–पत्रों, विधान–परिषदों में भाषणों की अपेक्षा उनके द्वारा सक्रिय कार्यवाहियों तथा तरीकों की मांग की जाने लगी।

उग्र राष्ट्रवादियों का विचार था कि भारतीयों को अपनी मुक्ति के लिए स्वयं कार्य करने की आवश्यकता है, ताकि वे अपनी निम्न अवस्था से ऊपर उठ सकें। इसके लिए उग्र राष्ट्रवादियों ने देशप्रेम, त्याग और बलिदान की आवश्यकता पर बल दिया। उनके राष्ट्रीय आंदोलन का लक्ष्य स्वराज्य की प्राप्ति था। **तिलक ने कहा था–" स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूंगा।"** उन्होंने कहा था," स्वराज्य या स्वशासन स्वधर्म के लिए आवश्यक है। स्वराज्य के बिना कोई सामाजिक सुधार नहीं हो सकते, न कोई औद्योगिक प्रगति, न कोई उपयोगी शिक्षा और न ही राष्ट्रीय जीवन की परिपूर्णता। हम यही चाहते हैं और इसी के लिए ईश्वर ने मुझे इस संसार में भेजा है।" स्वराज्य के सम्बन्ध में प्रमुख उग्रवादी **लाला लाजपतराय का विचार था–"जैसे दास की आत्मा नहीं होती , उसी प्रकार दास जाति की कोई आत्मा नहीं होती है। आत्मा के बिना मनुष्य केवल पशु है। इसलिए देश के लिए स्वराज्य परम आवश्यक है और सुधार या उत्तम राज्य उसके विकल्प नहीं हो सकते।"**

उग्रवादी आंदोलन के उदय के कारण
(Causes of Emergence of Extremist Movement)

उग्रवादी आंदोलन के आरम्भ होने के निम्नलिखित कारण मुख्य रूप से जिम्मेदार थे–

(1) 1892 के अधिनियम के प्रति असंतोष (Discontent Over Act, 1892)–उदारवादी राष्ट्रवादियों की निरन्तर मांगों को देखते हुए सरकार द्वारा 1892 में कौंसिल अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम से भारतीयों को बहुत आशाएं थीं, किन्तु इस अधिनियम द्वारा उदारवादी कांग्रेसियों की किसी भी मांग को स्वीकार नहीं किया गया। इस अधिनियम द्वारा न तो भारतीयों को कोई विशेष राजनैतिक अधिकार प्राप्त हुए और न जनता को अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया। इसलिए यह अधिनियम भारतीयों को सन्तुष्ट नहीं कर सका। अतः अनेक भारतीय नेता विवश होकर उग्रवाद की ओर बढ़ने लगे। **तिलक ने कहा "प्रार्थनाओं व विरोधपत्रों के दिन बीत चुके है। यह अपेक्षा करना कि हमारी प्रार्थनाओं पर विचार किया जाएगा, व्यर्थ है जब तक प्रार्थनाओं के पीछे दृढ़ संकल्प न हों।"**

(2) कांग्रेसी उदारवादियों की उपलब्धियों पर असंतोष (Discontent Over Achievements of Congress Moderates)–कांग्रेस का युवावर्ग कांग्रेस के पूर्ववर्ती 15–20 वर्षों की उपलब्धियों एवं सरकार की प्रतिक्रियावादी नीतियों व उदासीनता से असन्तुष्ट था। उनका

अंग्रेजों की न्यायप्रियता एवं समानता की भावना में कोई विश्वास नहीं था। वे उदारवादियों के शांतिमय तथा संवैधानिक तरीकों के आलोचक बन गये थे। उनका विश्वास था कि याचना, प्रार्थना और प्रतिवाद की नीति से कुछ भी प्राप्त नहीं होने वाला है। कांग्रेस का राजनैतिक धर्म क्राउन के प्रति राजभक्ति प्रकट करना है तथा उनका उद्देश्य प्रान्तीय व केन्द्रीय विधान परिषदों में सदस्यता प्राप्त करना है। कांग्रेस के युवा वर्ग ने उदारवादियों पर केवल मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों के लिए कार्य करने का आरोप लगाया तथा कांग्रेस के अन्तर्गत रचनात्मक कार्यक्रम का अभाव बताया। तिलक ने कांग्रेस को 'चापलूसों का सम्मेलन' और लाला लाजपत राय ने उसे 'वार्षिक राष्ट्रीय मेले' की संज्ञा दी। लाल, बाल तथा पाल जैसे नेताओं ने अनुभव किया कि उदारवादियों द्वारा प्रतिपादित नीति के अवलम्बन से कोई लाभ नहीं है तथा अंग्रेजों के भारत विजय का आधार उनकी स्वार्थसिद्धि है। अतः तब तक वे इस देश को नहीं छोडेगें, जब तक कि उन्हें यहां से जबरदस्ती न निकाल दिया जाये।

(3) ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीति (Economic Policy of British Government)—भारतीय जनता ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीतियों से बहुत असंतुष्ट थी। उनका यह असन्तोष उग्रवाद के उदय का एक प्रमुख कारण बना। अंग्रेजों के आगमन के पूर्व भारतीय कुटीर एवं शिल्प कला उद्योग काफी उन्नत अवस्था में थे। कृषि तथा कुटीर उद्योग के मध्य सन्तुलन था। लोगों को आजीविका के साधन उपलब्ध थे, किन्तु ब्रिटिश सरकार की भेदभावपूर्ण आर्थिक नीतियों ने भारतीय उद्योग–धन्धों का विनाश कर दिया। उन्होंने भारत को इंग्लैण्ड के लिए कच्चे माल निर्यातक मण्डी के रूप में परिवर्तित कर दिया तथा वहां से उत्पादित वस्तुएं भारत आने लगीं। **जॉन सूलीवान ने कहा था "हमारी प्रणाली एक ऐसे स्पंज के रूप में काम करती है, जो गंगा के किनारों से प्रत्येक अच्छी वस्तु ले लेती है ओर फिर टैम्स के किनारे पर निचोड़ देती है।"[1]**

पहले कपास की बनी वस्तुओं पर 5 प्रतिशत आयात कर लगाया था, किन्तु बाद में उसे कम कर दिया गया ताकि बाहर से आनेवाला माल सस्ता हो जाये और भारतीय माल उसकी प्रतिस्पर्द्धा नहीं कर सकें। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार ने भारत के मिलों में तैयार किये गये मालों पर साढ़े तीन प्रतिशत उत्पादन कर लगाया। सरकार की इस भेदभावपूर्ण आर्थिक नीतियों से भारतीय वस्त्र उद्योग को गहरा धक्का लगा।

ब्रिटिश साम्राज्य का सबसे घातक प्रभाव भारतीय पूंजी तथा अन्य वस्तुओं का इंग्लैण्ड जाना और उसके बदले भारत को कुछ भी प्राप्त नहीं होना था। जब किसी देश से प्रतिकूल व्यापार सन्तुलन के फलस्वरूप सोने और चांदी का निकास होता रहे, किन्तु उन सबके बदले देश को पर्याप्त आर्थिक, व्यापारिक और भौतिक फल नहीं मिले तो उसे **धन का निकास'** कहते है। प्लासी युद्ध के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था पर इंग्लैण्ड का एकाधिकार होने से भारत के धन का अविरल प्रवाह अनेक स्त्रोतों से इंग्लैण्ड की ओर था। उन स्त्रोतों

1. *Our system acts much liked sponge...*

में निम्नलिखित प्रमुख थे– **भू–राजस्व, सैनिक तथा असैनिक पदों पर ऊँचे–ऊँचे वेतन, गृह शासन के बढ़ते व्यय, आयात–निर्यात की भेदभावपूर्ण नीतियाँ, भारतीय उद्योग–धन्धों के प्रति ब्रिटिश सरकार की भेदभावपूर्ण नीति** आदि। दादाभाई नौराजी ने धन के निकास को अनिष्टों के अनिष्ट की संज्ञा दी उन्होंने कहा है "यह एक ऐसे लुटे हुए राष्ट्र की अवस्था है, जहां लुटेरा लगातार लूट रहा है और फिर साफ बचकर निकल जाता है। इस धन के निकास के कारण देश में पूंजी एकत्रित नहीं हो सकती, जिससे देश के औद्योगिक विकास की गति बहुत धीमी हो गई। भारतीय धन के इंग्लैण्ड को निकास होने से इंग्लैण्ड में औद्योगिक विकास के आधार की गति बहुत बढ़ गई, विशेषकर औद्योगिक क्रान्ति के दिनों में। इसका सर्वाधिक दोषपूर्ण पक्ष यह था कि यही धन पुनः भारत में पूंजी के रूप में लगा दिया जाता था और भारत का शोषण निरन्तर बढ़ता जाता था। इस धन के निष्कासन से भारत में रोजगार तथा आय की संभावनाओं पर अत्यधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। **आर.सी.दत्त** ने एक भारतीय कवि की इस उपमा का उल्लेख किया था, जिसमें **"राजा का अपने जनता से अधिक कर ग्रहण करना सूरज द्वारा पृथ्वी से उस पानी के प्राप्त करने के समान होता है, जो वह वर्षा के रूप में पुनः भूमि को देता है। परन्तु सूर्य रूपी ब्रिटिश सरकार पानी भारत से ग्रहण कर उसे इंग्लैण्ड में वर्षा करने लगी।**"

अंग्रेज सरकार की आर्थिक नीतियों के कारण भारतवासी अंग्रेजों के विरोधी एवं आलोचक हो गये और इससे उग्रवाद के विकास में काफी सहायता मिली।

(4) शिक्षा तथा बेराजगारी की वृद्धि (Growth of Education and Unemployment) –उन्नीसवीं सदी तक भारत में शिक्षित भारतीयों की संख्या अध्सिक बढ़ गई थी। बहुत से **भारतीयों** को ब्रिटिश प्रशासन के अन्तर्गत कम वेतन पर आजीविका प्राप्त थी, पर इन शिक्षित **भारतीयों** का एक बहुत बड़ा वर्ग बेरोजगारी का भी सामना कर रहा था। बेरोजगारी ने शिक्षित भारतीयों के मन में ब्रिटिश शासन के प्रति उग्र भावना का विकास किया। **प्रो. ए. आर.देसाई** ने उग्रवादी आंदोलन के कारणों पर प्रकाश डालते हुए कहा है, **"भारत में उग्रवाद के उदय का एक प्रमुख कारण शिक्षित भारतीयों में बेकारी से उत्पन्न राजनैतिक असन्तोष था।"**

शिक्षा प्रसार के फलस्वरूप शिक्षित भारतीयों के मन में जनतंत्र तथा राष्ट्रवाद के विचारों का प्रभाव पड़ने लगा था। इन शिक्षित भारतीयों ने उग्र राष्ट्रवाद के प्रचार और प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(5) अकाल और महामारी (Famine and Epidemic)–उग्र राष्ट्रीयता के विकास का एक अन्य प्रमुख कारण अकाल एवं महामारी जैसी आपदाओं का प्रभाव भी था। ब्रिटिश सरकार ने उसके समाधान के लिए जिस उदासीनता तथा सुस्ती का परिचय दिया, उससे जनता में सरकार के प्रति असन्तोष की भावना उत्पन्न हुई। भारत में 1896–97 ई. में दक्षिण में अत्यन्त भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा। इससे जनता को काफी कष्ट उठाना पड़ा तथा जन–धन की काफी क्षति हुई। 1898 ई. में पश्चिमी भाग में प्लेग का प्रकोप हुआ, जिसके कारण हजारों लोगों की मौत हुई। बीमारी की उग्रता को देखते हुए पूना में बीमारी का उपचार **फौज को**

सुपुर्द कर दिया गया तथा सिपाहियों को घर में जाकर बीमारी की जांच के आदेश दिये गये। स्त्रियों की जांच भी विदेशी सिपाही करें; यह भारतीयों को पसन्द नहीं था। **तिलक** के अनुसार सरकारी अधिकारी कठोर तथा भ्रष्ट थे। उनका कहना था **"प्लेग हमारे लिए सरकारी प्रयत्नों से कम निर्दयी है।"** फलतः पूना में असन्तोष की भावना ने उग्र रूप धारण कर लिया और प्लेग अफसर रैण्ड की हत्या कर दी गई। इस पर सरकार ने दमन चक्र तीव्र किया, जिससे सरकार के प्रति घृणा की भावना और अधिक बढ़ गई। जनसारधारण द्वारा किये गये उग्र एवं क्रांतिकारी विरोध का वस्तुतः यह प्रारम्भ था।

(6) धार्मिक पुनरूत्थान और सांस्कृतिक नवजागरण (Revival of Religious and Cultural **Awakening**)—उदार राष्ट्रवादी पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति से प्रभावित थे। उन्होंने पाश्चात्य बुद्धिवाद तथा आदर्शों को अपनाया था, जिसके कारण अपने उच्च आदर्शों के बावजूद जनसाधारण पर अपना प्रभाव स्थापित करने में असफल रहे थे। अतः इसके नेताओं और जनता के मध्य खाई बनी रही।

19वीं शताब्दी के अन्त में भारत में धार्मिक पुनरूत्थान और सांस्कृतिक नवजागरण का काल प्रारम्भ हुआ, जिसमें भारतीयों को अपनी प्राचीन सभ्यता तथा संस्कृति की ओर लौटने को कहा गया। स्वामी विवेकानन्द ने 1893 ई. में शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में हिन्दू–धर्म की महानता को स्थापित किया। तिलक ने गीता रहस्य की रचना की तथा कर्मयोग पर प्रकाश डाला। स्वामी दयानन्द ने वेदों की महत्ता प्रतिपादित की। एनी बेसेन्ट की समन्वयवादी थियोसोफिकल सोसायटी ने भी इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

तिलक, विपिनचन्द्र पाल, अरविन्द घोष आदि इन समाज व धर्म सुधारकों से काफी प्रभावित थे। यद्यपि राष्ट्रीयता और धार्मिक पुनरूद्धार का गठबंधन पूर्णतया प्रगतिशील विकास नहीं था तथा इनकें द्वारा हिन्दू संस्कृति पर दिया गया दबाव भी उचित नहीं था, किन्तु उग्रवादियों ने जनता के मध्य समाज व धर्म सुधारकों के विचारों को फैलाया। उग्र राष्ट्रवादियों ने विदेशी शासन के प्रतिकार तथा देश के लिए बलिदान की भावना उत्पन्न की। इन नेताओं ने जनता को बताया कि हिन्दू धर्म के गौरव तथा भारत की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक उन्नति के लिए भारत की स्वतंत्रता आवश्यक है। **अरविन्द घोष ने कहा "राष्ट्रवाद एक धर्म है, जिसकी उत्पत्ति एक ईश्वरीय देन है। स्वतंत्रता हमारे जीवन का उद्देश्य है और हिन्दू धर्म हमारी इस अभिलाषा को पूर्ण करेगा।"**[1]

विपिनचन्द्र **पाल ने कहा "स्वतंत्रता हमारे जीवन का ध्येय है और इसकी प्राप्ति हिन्दू धर्म से ही सम्भव है।**[2]

इस प्रकार उग्रवाद के विकास में धार्मिक पुनरूत्थान और सांस्कृतिक नवजागरण से काफी प्रेरणा मिली।

(7) अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं का प्रभाव (Effect of International Events)—अन्तर्राष्ट्रीय घटनाएं भी इस आन्दोलन में सहायक सिद्ध हुई। पश्चिमी नियंत्रण से मुक्ति के कुछ ही वर्षों के अंदर जापान विश्व में प्रथम कोटि का विकासशील, औद्योगिक, सैनिक शक्ति बन गया।

1896 ई. में इटली की इथोपिया के हाथों पराजय, 1905 में जापान द्वारा रूस की पराजय आदि घटनाओं ने भारतीयों के मन से यूरोपीय श्रेष्ठता की कल्पना को समाप्त कर दिया। उनके मन में भी यह भावना बल पकड़ने लगी कि भारत भी अपने साहस, शौर्य एवं बलिदान द्वारा इंग्लैण्ड से टक्कर ले सकता हैं। आयरलैण्ड, रूस, मिस्र, तुर्की तथा चीन के क्रांतिकारी आंदोलनों तथा दक्षिणी अफ्रीका के बोअर युद्ध ने भरतीयों को देशभक्ति तथा आत्म बलिदान की भावना से भर दिया। जब भारतीयों ने अंग्रेजी भाषा और पाश्चात्य शिक्षा पद्धति के माध्यम **से मैजिनी, वर्क गैरीबाल्डी और वाशिंटन के स्वतन्त्रता को प्रेरित करने वाले भाषण पढ़े, अमरीका का स्वतन्त्रता संग्राम, आयरलैण्ड का संघर्ष, इंग्लैण्ड की गौरवपूर्ण क्रान्ति** के इतिहास का अध्ययन किया तो स्वतन्त्रता की ओर बढ़े परिणामस्वरूप उग्रवादी राष्ट्रीयता का उदय हुआ।

(8) राजनैतिक कारण (Political Causes)—भारतीय राजनीति में उग्रवाद के विकास में राजनैतिक कारणों से भी काफी सहायता मिली। 1892 से 1905 ई. तक ब्रिटेन के शासन तंत्र पर अनुदार दल का अधिकार था, जिसकी नीति उग्र साम्राज्यवादी थी। अनुदार दल भारतीयों को राजनैतिक अधिकार प्रदान किये जाने का विरोधी था। इस काल के तीन गवर्नर जनरल, लार्ड लैन्सडाउन, लार्ड एल्गिन तथा लार्ड कर्जन घोर साम्राज्यवादी थे तथा भारतीय जनता के प्रति उनकी नीति काफी कठोर थी।

ब्रिटेन के अनुदार दल के कार्यों की आलोचना करते हुए गोखले जैसे उदारवादी नेता ने भी कहा था कि—**"सरकार जिस प्रतिगामी नीति का अनुसरण कर रही है, उसका परिणाम सरकार के लिए भयानक सिद्ध हो सकता है।"**[1]

लार्ड एल्गिन के शासनकाल 1897 ई. में तिलक को राजद्रोह के अपराध में 18 माह की सजा, दक्षिण के सुप्रसिद्ध और प्रभावशाली जमीदार नाटु बन्धुओं को देश निकाले की सजा आदि घटनाओं ने सम्पूर्ण देश में क्रोध एवं असन्तोष की भावना को जन्म दिया। लार्ड कर्जन के ही शासनकाल में भारत जब अकाल की विभीषिका झेल रहा था। कर्जन ने अकाल राहत कार्यों में सरकारी सहायता के बजाय 1903 ई. दिल्ली में एक शानदार दरबार आयोजित कर उस पर लाखों रूपयें खर्च कर भारतीयों के असंतोष को और बढ़ावा दिया। **रमेश चन्द्र दत्त के शब्दों में—'ब्रिटिश शासकों की न्याय और समदृष्टि भावना में भारतीय जनता का जो विश्वास था, वह ऐसा हिल गया, जैसा पहले कभी नही हुआ था।'**[2]

---

(9) लार्ड कर्जन की दमनकारी नीतियाँ (Repressive Policy of Lord Curzon)—लार्ड एल्गिन के बाद लार्ड कर्जन भारत का गवर्नर जनरल बन कर आया। उसने अपने पूर्ववर्ती गवर्नर जनरलों की अपेक्षा और अधिक उग्र व आक्रामक नीतियां अपनाई। उसकी नीतियों का परिणाम विस्फोटक हुआ। उग्रवाद के विकास में उसके निम्नलिखित कार्यों से मदद मिली—

(i) **केन्द्रीयकरण की नीति** (Policy of Centralization)—भारतीयों को अयोग्य मानते हुए कर्जन ने शासन के सभी क्षेत्रों में केन्द्रीयकरण की नीति अपनाई। उसने मद्रास और बम्बई के गवर्नरों की विशेष स्थिति के खिलाफ आवाज उठाई।

(ii) **कलकत्ता निगम अधिनियम 1899** (Culcutta Corporation Act)—लार्ड रिपन के उदार शासनकाल में स्थानीय संस्थाओं का विकास हुआ था, किन्तु कर्जन को यह पसन्द नहीं था कि भारतीयों को स्वशासन की शिक्षा मिले। अतः उसने 1899 में कलकत्ता निगम अधिनियम पारित किया जिसके द्वारा निगम के सदस्यों की संख्या 75 से घटाकर 50 कर दी गई। जिन 25 सदस्यों की संख्या घटाई गई वे करदाताओं के प्रतिनिधि थे। इस तरह जनता के प्रतिनिधियों की संख्या घटने से कलकत्ता निगम पर सरकारी नियंत्रण बहुत बढ़ गया।

(iii)भारतीय विश्वविद्यालय एक्ट 1904 (Indian University Act)—भारतीय विश्वविद्यालय एक्ट 1904 द्वारा विश्वविद्यालयों की आन्तरिक स्वायत्तता को पूर्णतः कुचलने का प्रतिक्रियात्मक कदम कर्जन ने उठाया, जिसकी उच्च शिक्षा सम्पन्न भारतीयों ने उग्र प्रतिक्रिया की। अधिनियम द्वारा सीट के सदस्यों की संख्या घटा दी गई, उनमें सरकार द्वारा नामजद सदस्यों का बहुमत कायम कर दिया गया। कॉलेजों पर विश्वविद्यालयों का पूर्ण नियंत्रण रखा गया, जिससे उन पर सरकारी नियंत्रण बहुत अधिक हो गया।

(iv) **सरकारी गोपनीय विषयों से सम्बन्धित अधिनियम–1904 ई.**(Official Secrets Act) – इस अधिनियम द्वारा असैनिक विषयों को भेद देना, समाचार–पत्रों में सरकार के प्रति दोष की भावना उत्पन्न करने वाला समाचार छापना, वर्ग विभेद को प्रोत्साहन देना दण्डनीय अपराध माने गये।

(v) **भारतीयों के प्रति अभद्र व्यवहार** (Uncivilized Behaviour Towards Indian)—कर्जन भारतीयों को घृणा की नजर से देखता था तथा उनके प्रति कर्जन का व्यवहार काफी अभद्र था। उसका मानना था कि भारतीयों का चरित्र और मानसिक स्तर यूरोपियों की तुलना में बहुत निम्न हैं। अतः कर्जन ने उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों के लिए भारतीयों को सर्वथा अयोग्य समझा। 1905 ई. में कलकत्ता विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में उसने **'भारतीयों को नीच तथा नैतिकता रहित'** बताया। सारे देश में इस भाषण की प्रतिक्रिया एवं विरोध हुआ। कर्जन **"भारत राष्ट्र"** सदृश किसी धारणा को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था। उसके इस कथन ने भारतीयों में असीम रोष को जन्म दिया। उसने समय–समय पर कांग्रेस के विरुद्ध अपने विचार व्यक्त कर भारतीयों को आहत किया।

(vi) **कर्जन की विदेश नीति** (Foreign Policy of Curzon)– कर्जन की विदेश नीति से भारतीय काफी क्षुब्ध थे। उसने घोर साम्राज्यवादी नीति का अवलम्बन किया। अंग्रेजी साम्राज्य की सुरक्षा वृद्धि के लिए उसने चीन और दक्षिण अफ्रीका में भारतीय खर्च से सेनाएं भेजीं। भारतीय साम्राज्य को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से उसने भारत के चारों ओर के देशों को अपनी ओर मिलाने की योजना बनाई। 1904ई. में उसने तिब्बत पर आक्रमण किया। इन सभी सैनिक कार्यवाहियों का खर्च भारतीय कोष से वसूला गया। भारतीयों में कर्जन की विदेश नीति के विरूद्ध तीव्र प्रतिक्रिया हुई और उन्होंने खुले तौर पर कर्जन की विदेश नीति का विरोध प्रारम्भ कर दिया।

(vii)**बंगाल का विभाजन 1905 ई.** (Partition of Bengal)– लार्ड कर्जन के शासनकाल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य बंगाल का विभाजन था। इस विभाजन के पूर्व बंगाल में आसाम, बिहार तथा उड़ीसा सम्मिलित थे। वास्तव में यह एक विशाल प्रांत था और एक लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा प्रशासन में असुविधा होती थी।[1] अतः बंगाल का विभाजन कोई अनुचित कदम नहीं था, किन्तु लार्ड कर्जन ने जिस उद्देश्य को सामने रखकर बंगाल का विभाजन किया वह अनुचित था। उसका उद्देश्य बंगाल के विभाजन द्वारा एक मुस्लिम बहुल क्षेत्र की स्थापना था। बंगाल का विभाजन भाषा के आधार पर न कर धर्म के आधार पर किये जाने से भारतीयों के मन में कर्जन के प्रति आक्रोश की भावना उत्पन्न हुई।

कर्जन ने बंगाल विभाजन की योजना 1903 ई. में बंगाल का दौरा करने तथा वहां की जनता में प्रबल राष्ट्रवादी भावनाओं को देखकर बनाई। पूर्वी बंगाल के **गवर्नर सर बैम्फाइल्ड** ने भी कहा था **"मेरी दो पत्नियाँ है, एक हिन्दू और एक मुस्लिम, किन्तु मैं दूसरी को अधिक चाहता हूँ।"**[2] इस प्रकार बंगाल विभाजन का उद्देश्य हिन्दू और मुसलमानों में फूट डालकर बंगाल की बढ़ती हुई राष्ट्रीयता को रोकना था। योजना के अनुसार ढाका, चटगांव और राजशाही मण्डलों को आसाम में मिलाकर एक नया प्रान्त बनाने की योजना बनाई, जिसकी राजधारी ढाका बनाई गई। शेष बंगाल की राजधानी कलकत्ता रखी गई। बंगाल विभाजन के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए भारत सरकार के **गृह सचिव रिस्ले** ने **6 दिसम्बर 1904 ई.** को एक सरकारी नोट में लिखा, **"संयुक्त बंगाल एक शक्ति है, विभाजन से बंगाल में कई दिशाओं में खींचतानी की प्रवृत्ती होगी। कांग्रेसी नेता यही महसूस करते हैं। उनकी आकांक्षाएं बिल्कुल सही है और यही इस परियोजना की एक महान अच्छाई है।"**[3]

अतः राष्ट्रवादियों ने विभाजन की कार्यवाही को प्रशासनिक कदम के रूप में नहीं बल्कि भारतीय राष्ट्रवाद के प्रति चुनौती के रूप में देखा। उन्हें कि लगा बंगाल विभाजन सरकार

द्वारा बंगालियों को विभाजित करने तथा बंगाल में राष्ट्रवाद को छिन्न–भिन्न कर कमजोर करने के लिए जान–बुझकर किया गया प्रयास था और इस विभाजन से बंगला भाषा तथा संस्कृति के विकास को गहरा धक्का लगेगा। उन्होंने सरकार पर जनमत की उपेक्षा का आरोप लगाया। बंगाल सहित सम्पूर्ण भारत में बंगाल विभाजन का घोर विरोध किया गया। 7 अगस्त 1905 ई. को कलकता के टाउनहाल में बहिष्कार की नीति अपनाई गई। तय किया गया कि जब तक बंगाल विभाजन का अंत नहीं हो जाता उस समय तक विदेशी माल का बहिष्कार किया जायेगा।

बंगाल के नेताओं द्वारा सम्पूर्ण बंगाल में इस विभाजन के विरोध में जोरदार प्रचार कार्य किया गया। इस कार्य में सुरेन्द्रगनाथ बनर्जी तथा विपिनचन्द्र पाल के कार्य विशेष उल्लेखनीय है। देश के सम्पूर्ण भाग में में आन्दोलन का समर्थन करते हुए विदेशी वस्तुओं और संस्थाओं के बहिष्कार के प्रस्ताव को स्वीकार किया गया।[1] भारत के राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में पहली बार विदेशी माल के बहिष्कार का यह आंदोलन चलाया गया।

किन्तु सरकार ने आंदोलन और भारतीय जनता की भावनाओं की परवाह न करते हुए 16 अक्टूबर 1905 ई. को बंगाल विभाजन की योजना को कार्यान्वित कर दिया। उस दिन सम्पूर्ण बंगाल में विभाजन के विरोध के लिए **'उपवास'** तथा **'राष्ट्रीय शोक दिवस'** मनाया गया। कलकता की गलियाँ वन्देमातरम् के नारों से गूंज उठी। अटूट एकता के प्रतीक के रूप में बंगाल की जनता ने एक–दूसरे को राखी बांधी। अनेक स्थानों पर विदेशी कपड़ों की होली जलाई गई। विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर धरना दिया गया। इससे भारतीय उद्योगों को काफी बढ़ावा मिला। बंगाल विभाजन के फलस्वरूप अनेक उदारवादी नेता अपना संयम खोने लगे।

बंगाल विभाजन के फलस्वरूप सम्पूर्ण देश के राष्ट्रीय आंदोलन में तीव्रता आई। भारत उग्रवादी आंदोलन के प्रबल वेग में प्रवाहित होने लगा। अंत में आंदोलन इतना तीव्र हो गया कि 1911 ई. में इस विभाजन को रद्द करना पड़ा और दूसरा विभाजन भाषा के आधार पर किया गया।

इस घटना से स्पष्ट हो गया कि कर्जन ने बंगाल का विभाजन कर एक बहुत बडी भूल की थी, किन्तु उसकी इस भूल ने भारत में उग्र राष्ट्रवाद के विकास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यदि वह बंगाल का विभाजन सोच–विचार कर करता तो सम्भवतः भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की प्रगति इतनी तीव्र नहीं होती, लेकिन उसके इस कार्य ने युवकों को यूरोपीय क्रांतिकारी आंदोलन का अनुकरण करने के लिए प्रेरित किया। **गांधी ने अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' में लिखा है कि "बंगाल विभाजन के बाद ही भारत में वास्तविक जाग्रति हुई, जिसके लिए हमें लार्ड कर्जन को धन्यवाद देना चाहिए।"**

उग्रवादियों अथवा गरम दल राष्ट्रवादियों की मनोवृत्तियाँ

(Characteristics of Extremist)

उग्रवादियों का प्रमुख राजनैतिक उद्देश्य **'स्वराज्य की प्राप्ति'** था। कार्यप्रणाली एवं कार्यपद्धति के आधार पर इनकी निम्नलिखित सामान्य प्रवृत्तियाँ थी –

1. भारतीय सभ्यता व संस्कृति को श्रेष्ठ एवं उच्च मानना।
2. पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति विरोधी।
3. इन्हें ब्रिटिश सरकार की न्यायप्रियता, उदारता एवं सर्वशक्तिशाली में तनिक भी विश्वास नहीं था।
4. भारतीय सभ्यता व संस्कृति के अनुरूप ही देशवासियों के चरित्र का निर्माण चाहते थे।
5. ईश्वर, राष्ट्र व आत्मनिर्भरता में विश्वास था।
6. राष्ट्रीय भावना जगाना, त्याग व कष्ट सहने के मार्ग को अपनाना ही इनके प्रमुख मार्ग थे।
7. संवैधानिक एवं सत्य के प्रयोग पर बल देते थे।
8. राजनैतिक भिक्षावृत्ति के स्थान पर सक्रीय राजनैतिक आन्दोलन में विश्वास करते थे।
9. उग्रवादियों का सम्बन्ध मध्यम वर्ग से था।
10. स्वाभिमान और स्वावलम्बन के प्रबल पक्षधर थे।

उग्र राष्ट्रवादियों के कार्यक्रम (Programmes of Extrem Nationalism)

1. बहिष्कार (Boycott)–उग्र राष्ट्रवादियों या गरमपंथी नेताओं ने अपने मुख्य कार्यक्रम के अंतर्गत विदेशी सामान के बहिष्कार की नीति अपनाई। बहिष्कार से तात्पर्य विदेशी वस्तुओं, सरकारी नौकरियों, प्रतिष्ठानों तथा उपाधियों का बहिष्कार था। जिसका सीधा प्रभाव ब्रिटिश सरकार पर पड़ेगा। **अरविंद घोष** ने बहिष्कार के आन्दोलन में निहित विचारधारा को स्पष्ट करते हुए लिखा कि – **'हम अपने मुख सरकारी भवनों से हटाकर साधारण जनों की कुटियों की तरफ ले जाना चाहते हैं। बहिष्कार आन्दोलन का यही मनोवैज्ञानिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक महत्व है।'** इनके पीछे उनकी यह मंशा थी कि जैसे–जैसे ब्रिटिश व्यापारियों को नुकसान होगा वैसे ही वो अंग्रेज सरकार पर दबाव डालेंगे कि बंगाल का विभाजन रद्द किया जाए।

2 स्वदेशी (Indigenous)–उग्र राष्ट्रवादियों ने "स्वदेशी" का नारा दिया जिसके अंतर्गत उन्होंने भारत में निर्मित सामान के प्रयोग पर जोर दिया, इसका उद्देश्य था कि भारतीय उद्योग को बढ़ावा मिलेगा और नवधनाढ्य व्यापारी वर्ग कांग्रेस आंदोलन को धन उपलब्ध कराकर सक्रिय भूमिका निभाएगा। इन्होंने स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने एवं स्वदेशी शासन व्यवस्था की स्थापना पर जोर दिया, क्योंकि स्वदेशी के मुक्ति का मार्ग समझते थे।

3. सहकारी संस्थाओं को बढ़ावा (Encouragement to Coperate Institute)–उग्र राष्ट्रवादियों ने सहकारी संस्थाओं को बढ़ावा दिया। ग्रामीण विकास, पुलिस व्यवस्था, मेलों

की व्यवस्था, तीर्थ यात्रियों की सुविधा और अन्य प्राकृतिक आपदाओं के समय, राहत कार्यों के लिए स्वयंसेवी संस्थाएं बनायी गयी। इन कदमों से जनता का विश्वास उग्र राष्ट्रवादी जीत पाए और अपने आंदोलन के लिए समर्थन जुटा पाए।

4. **राष्ट्रीय शिक्षा** (National Education)–उग्र राष्ट्रवादियों ने राष्ट्रीय शिक्षा पर बहुत बल दिया। उन्होंने सरकार नियोजित **शिक्षण** संस्थानों के स्थान पर एक राष्ट्रीय शिक्षा योजना बनाई। योजना थी कि विद्यार्थियों को देश सेवा में लगाया जाए। जब सरकार ने विद्यार्थियों के विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करने की धमकी दी तो विद्यार्थियों को कहा गया कि इन विश्वविद्यालयों को छोड़ दें। **सर गुरूदास बनर्जी ने बंगाल राष्ट्रीय शिक्षा परिषद्** (Bengal Council of National Education) बनाई और कलकत्ता में बंगाल नेशनल कॉलेज स्थापित किये गये। तिलक ने **'दक्षिण शिक्षा समाज'** नामक शैक्षिक संस्था की स्थापना की। इसके अलावा हिन्दू कॉलेज, थियोसोफीकल स्कूल एवं कॉलेज, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय आदि स्थापित किये गये। **पाल ने कहा कि –'राष्ट्रीय शिक्षा वह शिक्षा है, जो राष्ट्रीय रूपरेखाओं के आधार पर चलायी जाए, जो राष्ट्र के प्रतिनिधियों द्वारा नियंत्रित हो और इस प्रकार नियंत्रित एवं संचालित की जाए कि 'राष्ट्रीय भाग्य की प्राप्ति** (National Destiny) **इसका उद्देश्य बने।'**

5. **भारतीय गौरव व प्रतिष्ठा का प्रचार प्रसार** (Propogation of Indian Glory and Prestige)–भारत के प्राचीन गौरव और महापुरूषों की गाथा का वर्णन आम जनता के बीच किया जाता था ताकि लोग इनसे प्रेरणा ले सके। **शिवाजी उत्सव** और **गणेश उत्सव** की शुरूआत तिलक द्वारा इसलिए की गई ताकि जिनके दौरान राष्ट्रभक्ति के संदेश का प्रसार किया जा सके।

6. **पत्र–पत्रिकाओं** के माध्यम से प्रचार को बढ़ावा दिया गया। इनका प्रकाशन प्रादेशिक भाषाओं में भी किया जाता था। **"मराठा" एवं "केसरी"** तिलक द्वारा प्रकाशित प्रमुख पत्रिकाएँ थी।

7. **हिन्दी के प्रयोग पर** अत्यधिक बल दिया गया ताकि भाषाई आधार पर राष्ट्र को बांधा जा सके।

8. **पूर्ववर्ती नरमपंथी नेताओं के विचारों का विरोध करना** (Dovelopment in Appointment of Communal Elements in Government Services)–उदारवादियों के तरीकों को उग्रवादी 'राजनैतिक भिक्षावृत्ति (Political Mendicancy)' के नाम से पुकारते थे। तिलक ने कहा था कि 'हमारा उद्देश्य आत्मनिर्भरता है, भिक्षावृत्ति नहीं।' स्वराज्य को स्वावलम्बन के आधार पर प्राप्त करने पर बल देने वाले पाल ने कहा कि – 'हमें अपनी राष्ट्रीय शक्तियों को इस प्रकार संगठित करना चाहिए कि कोई भी शक्ति जो हमारे विरूद्ध हो, हमारे सन्मुख झुकने के लिए बाध्य हो जाए।' यह भी कहा कि – 'यदि सरकार मेरे पास आकर कहे कि स्वराज्य ले लो, तो मैं उपहार के लिए धन्यवाद देते हुए उससे कहूँगा कि मैं उस वस्तु को स्वीकार नहीं कर सकता, जिसको प्राप्त करने की सामर्थ्य मुझमें नहीं है।'

9. निष्क्रिय प्रतिरोध अथवा सत्याग्रह में विश्वास (Belief in Enactive Confrontation) –उग्रवादियों का निष्क्रिय प्रतिरोध में पूर्ण–विश्वास था। लाला लाजपतराय ने निष्क्रिय प्रतिरोध के दो लक्षण बतलाये थे–प्रथम भारतीयों के मन से यह भावना दूर करना कि ब्रिटिश सर्वशक्तिशाली है और भारत का हित करना उसका उद्देश्य है। द्वितीय, देशवासियों में स्वतन्त्रता के लिए त्याग वह कष्ट सहन करने की क्षमता उत्पन्न करना। निष्क्रिय प्रतिरोध को कई तरह से ठप्प किया जा सकता है। ऐसा संभव नहीं है कि प्रत्येक मजिस्ट्रेट कार्य करने से इनकार कर दे तथा एक व्यक्ति के त्याग–पत्र देने पर उसके स्थान पर पर कोई दूसरा व्यक्ति न मिले। परन्तु यदि यह भावना सम्पूर्ण देश में जाग्रत हो जाए तो समस्त सरकारी कार्यालयों में हड़ताल की जा सकती है। हम उस भारतीय की स्थिति, जो सरकारी कर्मचारी है, ऐसी कर सकते है कि जैसे वह भारतीय नागरिक के समान नीचे गिर गया हो।'

उग्रवादियों की उपलब्धियाँ (Achievements of Extremists)

कांग्रेस के उग्रवादी राष्ट्रीय आन्दोलन का भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। इन्होंने आन्दोलन को नवीनता प्रदान की। भारतीय जनता में आत्मनिर्भरता, स्वदेशी, राष्ट्रीयता एवं बहिष्कार आदि के माध्यम से नई लहर उत्पन्न कर दी। उनकी उपलब्धियाँ संक्षेप में इस प्रकार है–

1. निम्न मध्यम वर्ग को आन्दोलन से जोड़ा था।
2. भारतीय जनता में आत्मनिर्भरता एवं आत्मविश्वास की भावना जाग्रत की।
3. भारतीय संगठित होकर राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने लगे।
4. विदेशी माल का बहिष्कार, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग गाँधी जी के आन्दोलन के अग्रगामी के रूप में सिद्ध हुए।
5. बंगाल विभाजन को रद्द करवाया एवं ब्रिटिश सरकार को पहली बार जनमत के समक्ष झुकना पड़ा।
6. अंग्रेजी शासन के चेहरे पर पड़े दयालुता व न्यायप्रियता के नकाब को उतार फैंका।